पंचम अध्याय
अनामिका के काव्य में स्त्री का व्यक्तिगत जीवन

स्त्री ईश्वर की एक ऐसी अद्भुत रचना है जिसके भीतर दया, ममता, सहानुभूति, प्रेम, त्याग, संवेदना, करुणा, कोमलता, नाजुकता आदि गुण भरे पड़े हैं। किन्तु पुरुष अपने अत्याचारों और अभद्र व्यवहार से उसी कोमलांगना को कठोर बनने के लिए विवश करता है। स्त्री के अनेक रूप हमारे सामने आये और धुंधले होते चले गये। स्त्री माँ, बहन, बेटी और पत्नी के रूप में सदा ही पुरुष के साथ रहती हैं। स्त्री का कोई भी रूप हमारे सामने आया हो, किन्तु पुरुष ने उसे केवल छलने का कार्य ही किया है। कोई भी काल रहा हो स्त्री छल से बच नहीं सकी है। आधुनिक और उत्तर आधुनिक काल में अनेक विमर्श उभर कर सामने आये। इन विमर्शों में प्रमुख रूप से आदिवासी विमर्श, दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, स्त्री चेतना आदि प्रमुख हैं।

आधुनिक काल की स्त्री लेखिकाओं में अनामिका का एक विशिष्ट स्थान हैं। अनामिका ने गद्य और पद्य दोनों ही विधाओं में सृजन कर अपनी सृजनधर्मिता का बखूबी निर्वहन किया है। स्त्री विमर्श के स्वरूप पर अनामिका ने अपने विचारों को व्यक्त करते हुए कहा है कि- "शुरूआती दौर में यह स्त्री पुरुष सम्बंधों, स्त्री की आर्थिक, सामाजिक, पारिवारिक समस्याओं तथा समाज के उपेक्षित वर्गों की समस्याओं तक ही सीमित था, मूलतः स्त्री केन्द्रित ही था, लेकिन अब इसकी दृष्टि व्यापक हो गयी है। अन्तर्राष्ट्रीय फलक पर जितनी भी घटनाएँ घट रही हैं, उन सबकी चिन्ता भी इसके केन्द्र में है। सम्बन्धों में संवेदना का ह्रास और उसके कारण विघटन की जो स्थिति बनी है, इसके पीछे मनोवैज्ञानिक कारण है और स्त्री विमर्श उसी का निवारण मनोवैज्ञानिक तरीके से चाहता है। हिंसा का बदला हिंसा से नहीं लिया जा सकता। मनुष्य स्वभाव से इतना क्रूर और हिंसक जो हो गया, बचपन से मन में पड़ी किसी कुंठा का ही परिणाम है। स्त्री विमर्श मानव के मन में आशा का संचार करना चाहता है। फिर से मानवीय मूल्यों से संपृक्त करना चाहता हैं।

आशावादिता इसका मूलमन्त्र है।"[1] 'स्त्री' शब्द 'सत्यै" धातु में ड्रप और ड्रीप प्रत्यय के योग से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है- ठहरना, घेरा बनाना, फैलना। इस प्रकार इसका व्युत्पत्ति परक अर्थ हुआ-"स्त्यायेते आस्थां गर्भ अति स्त्री "- अर्थात् जहाँ पर गर्भ ठहरता है उसे स्त्री कहते है। नारी और महिला आदि इसके पर्यायवाची है।

वैदिक काल से लेकर आज तक नारी के लिए 'स्त्री' शब्द का सबसे अधिक प्रचलन हुआ है। स्त्री वैदिक कालीन संस्कृत शब्द है। ऋग्वेद में इसका सर्वप्रथम प्रयोग मिलता है। "स्त्री शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार "स्त्री सूत्री जन्मदात्री" अर्थात् वह परिवार की सूत्रधारक होने से स्त्री कहलाती है और जन्म देने वाली होने से स्त्री कहलाती है।"[2]

कमल कुमार मुक्ता ने स्त्री को परिभाषित करते हुए लिखा है- "मेरी दृष्टि में स्त्री पानी है, उसे पिये बिना जीवन नहीं चलता। उसमें नहाए बिना पवित्रता का एहसास नहीं होता। बहते पानी के किनारे बैठ राग-विराग और अनुराग का स्पर्श नहीं होता। बरसते पानी में भीगे बिना मौसमों का अन्दाज नहीं मिलता। बाढ़ के पानी में तैरे बिना कोई किनारा नहीं मिलता।"[3] स्त्री विमर्श में अनामिका उनकी उपलब्धियों के बारे में प्रकाश डालते हुए कहती है कि- ‘‘स्त्री विमर्श की सबसे बड़ी उपलब्धि ही यही है कि अपनी खुद की चेतना जागी है। हर वर्ग, धर्म, जाति के लोगों में एक नयी चेतना जाग्रत हुई हैं। यहाँ तक की सड़क पर रहने वाली स्त्री भी अपने अधिकारों के प्रति सजग हो उठी हैं।"[4]

स्त्री की स्थिति निर्धारित करने में कोई भी जैविक मनोवैज्ञानिक, आर्थिक नियति एक मात्र नियन्ता नहीं होती। स्त्री जन्म से नहीं बढ़कर स्त्री होती है। स्त्री की जैविक भिन्नता उनके लैंगिक अन्तर को व्याख्यातित करती है। लेकिन सामाजिक जिम्मेदारी एवं कार्यों के कारण उसकी जैविक भिन्नता की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है।

प्रथम स्राव-

नारी के व्यक्तित्व पहचान के लिए विभिन्न आन्दोलन हो रहे है। इस समस्त आन्दोलनों का उद्देश्य नारी का अस्तित्व अपनी पहचान, अपनी स्वतन्त्रता, अपनी

क्षमता तथा नारी के लिए सुखद भविष्य का निर्माण करना हैं। आज स्त्री विभिन्न उच्च पदों पर कार्यरत होने के बावजूद भी उसका स्वतन्त्र अस्तित्व सहजतापूर्वक स्वीकार नहीं किया जाता है। पुरुष प्रधान सत्तात्मक समाज में अपना सम्मानित स्थान सुरक्षित करने की लालसा ही स्त्री को स्त्री का दुश्मन बना रही है। स्त्री स्वयं अपना भाव है। स्त्री के लिये यौनत्व का दावा महत्वपूर्ण है। स्त्री के प्रथम स्राव पर शायद ही किसी अन्य ने लिखा होगा। 'स्त्री और पुरुष की शारीरिक संरचना में महत्वपूर्ण भेद स्त्री के पास गर्भाशय का होना है। स्त्री वर्ष में तेरह बार उर्वरा होती हैं और गर्भवती बनने की सम्भावना व्यक्त करती है।"[5] ''स्त्री की देह का वैभव, उसके रहस्य, उसके गोपन, उसी लज्जाएँ सभी के जाने पहचाने खुले हैं, फिर भी गोपन रहस्य है-इसका क्या औचित्य है? शायद मात्र इतना ही कि स्त्री को स्वयं उसकी देह के संदर्भ में सहजन बनाये रखा जा सके।'[6] स्त्री को मासिक धर्म के समय को अपवित्रता से अधिक जोड़ा जाता है। मुसलमान, हिन्दू, यहूदी, मध्यकालीन कैथोलिक रजस्वला स्त्री को अशुद्ध व अपवित्र मानते रहे हैं। ऋतुमति होने की ऐसी व्याख्या शायद ही किसी ने व्यक्त ही जैसी अनामिका ने प्रथम रजोस्राव के अनुभव को प्रकट किया है-

''कुंडलिनी-सी जगी बैठी

पलँग पर !

उसकी सफेद फ्राक और जाँघिए पर

किसी परी माँ ने काढ़ दिये हैं

कत्थई गुलाब रात भर में?

और कहानी के वे सात बौने

क्यों गुत्थमगुत्थी

मचा रहे हैं

उसके पेट में?"[7]

स्त्री शिक्षा जागरूकता, चिकित्सा विज्ञान ने यह सम्भव किया कि मासिक धर्म के प्रति दृष्टि सहज हो, इसे किसी बीमारी से न जोड़ा जाए। मासिक स्राव से पहले की पीड़ा के कारण स्त्रियों में जिस चिड़चिड़ेपन की बात की जाती है, वह वास्तव में उसके अन्दर नई ऊर्जा का संचार करता है। मासिक धर्म स्त्री की कार्यक्षमता को उतना ही प्रभावित करता है जितना पौरुष से जुड़ी चिन्ताएँ पुरुष को प्रभावित करती है।"[8] ऋतुमति होना एक लड़की का स्रष्टा बनने की प्रक्रिया का वह लक्षण और परिवर्तन है, जिसके बिना वह गर्भ धारण नहीं कर सकती।

"अनहद-सी बज रही है लड़की

काँपती हुई

लगातार झंकृत हैं उसकी जंघाओं में इकतारे

चक्रों-सी नाच रही है

वह एक महीयसी मुद्रा में

गोद में छुपाये हुए

सृष्टि के प्रथम सूर्य-सा

लाल-लाल तकिया।"[9]

पूजा स्थलों पर रजोधर्म स्त्रियों का जाना वर्जित होता है। इस पर तीखा प्रहार करते हुए अनामिका ने लिखा है-

"ईसा मसीह

और नहीं थे

वरना मासिक धर्म

ग्यारह बरस की उमर से

उनको ठिठकाये ही रखता

देवालय के बाहर।"[10]

परिवार में स्त्री का दर्जा दोयम हो, घर और बच्चों की देखभाल तक उसकी जिम्मेदारी सीमित हो, उसका अपना कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व न विकसित हो सकता हो, तब वह परिवार में उपस्थित होकर भी स्वयं को अनुपस्थित समझने लगती हैं। ऐसी ही अभिव्यक्तिपरक एक कविता और देखें-

"लोग दूर जा रहे हैं

हर कोई किसी से दूर

लोग दूर जा रहे हैं

और बढ़ रहा है

मेरे आस-पास का स्पेस।"[11]

गर्भिणी स्त्री-

स्त्री की कोख उर्वरा स्त्री को भ्रूण के विकास का स्थान एवं अवसर उपलब्ध करता हैं। जिसे रतिक्रिया और प्रजनन पारस्परिक होते हुए भी एक ही बात नहीं हैं। रतिक्रिया में आनन्द प्राप्त किये बिना ही स्त्री गर्भाधान कर सकती है। गर्भाधान रतिक्रिया की पूर्णता नहीं है।"[12] अनामिका स्त्री जीवन में भी अनछुए एवं अनदेखे अनुभव सन्दर्भों को कविता में समूर्त रूप दे देती है। जैसे ऋतुमति होना, गर्भधारण करना, दूध पिलाना, बच्चे बड़े करना, पिटना बलात्कार, आदि अनुभव को व्यक्त करती है। स्त्री जब पहली बार गर्भिणी बनती है तब उसे भी कुछ अनुभूतियाँ होती है जिसका चित्रण अनामिका ने किया है। यथा-

"मेरे भीतर कुछ चल रहा है।

नहीं, षड्यन्त्र नहीं, तन्त्र नहीं, मन्त्र नहीं,

क्या पता क्या-

पर कुछ घट रहा है,

जैसी घटती है घटना-कुछ घट रहा है,

नहीं बढ़ रहा है भीतर-भीतर।"[13]

अनामिका ने स्त्री के व्यक्तिगत जीवन में घटित होने वाली अनेक घटनाओं का वर्णन बड़े ही मार्मिक ढ़ग से किया है। प्रजनन के चयन का दावा, देह के दावे को सशक्त ढ़ंग से अनामिका ने अपनी कविता में प्रस्तुत किया है। यथा-

"देखो यहाँ बिल्कुल यहाँ-

नाभि के बीचों-बीच

उठते गिरते हथौड़ों के नीचे

लगातार जैसे कुछ ढल रहा है।"[14]

गर्भाधान का सम्बन्ध मातृत्व से जुड़ता है। मातृत्व वह मनोवृत्ति है जो गर्भस्थ शिशु के साथ माता के मन में एकात्मक लगाव उत्पन्न करती है। बच्चा माँ की रक्त मज्जा से बड़ा होता है। इसलिए स्त्री सृजन का अनुभव करती है। अनामिका ने गर्भिणी स्त्री और गर्भाशय में विकसित होने वाले भ्रूण का अनुभव करते हुए लिखा हैं-

"बढ़ रहा है जैसे बढ़ती है नदी

या कि वृक्ष

नहीं, घर नहीं, दीवार नहीं,

छत भी नहीं, लेकिन कुछ-न-कुछ

ढह रहा है मेरे भीतर

जैसे नयी ईंट की धमक से

मारे खुशी के भहर जाता है खंडहर"[15]

गर्भ में बच्चे को विकसित करना एक मशीनी कार्य हो जाता है। कि पागल स्त्री और स्वस्थ स्त्री के गर्भस्थ शिशु एक सी यान्त्रिक प्रकृतियों से विकसित होते।

"गर्भ वह परजीवी भ्रूण है जो स्त्री के शरीर की रक्त मज्जा से अपना पोषण प्राप्त करता है। माँ के शरीर में बढ़ता हुआ नैमित्तिक सत्य, जिसका जीना-मरना पारिस्थितिक हैं।"[16]

"जल रहा है-
लोहे के किसी पिण्ड-सा
थोड़ा-सा ठोस, थोड़ा तरल-
कुछ नया और कुछ एकदम प्राचीन
पल रहा है मेरे भीतर
मेरे भीतर कुछ चल रहा है।"[17]

प्रसवकालीन स्त्री-

सन्तान उत्पत्ति के केन्द रूप में परिणत स्त्री को प्रसव वेदना सहना ही पड़ती है। प्रसव के दौरान वर्तमान में दो परिस्थितियों का प्रचलन होना है। प्रथम स्थिति को सामान्य स्थिति कहते है और दूसरी को ऑपरेशन (शल्य चिकित्सा) की। दोनों ही परिस्थितियों में स्त्री का दूसरा जन्म होना माना जाता है। प्रसव अपने आप में स्त्री के लिए एक अनोखा अनुभव है। प्रसव के दौरान स्त्रियाँ अनजान स्त्री की सहायता के लिए आगे आ जाती है। स्त्री ममता, प्रेम का उदात्त और विशुद्व रूप हैं। स्त्री जीवन का यह मातृत्व का महत्वपूर्ण पक्ष सब परिवेश और सब स्त्रियों के लिए समान नहीं हैं। प्रसव वेदना को अनामिका प्रस्तुत करते हुए लिखती है-

"यह मेरा सातवाँ था
ठीक-ठीक कहिए तो आठवाँ
इसको जनकर थोड़ा पछताई भी थी मैं
खून से लिथड़ा हुआ
यह मेरी जाँघों के बीच पड़ा था,

आँखें नहीं खुली थीं

नाल नहीं कटी थी।

कुछ था जो नहीं था

और कुछ नहीं था जो था।

ऐंठ रहे थे मेरे पाँव

बार-बार छाती में

उलझ रही थी डाल्फिन मछली।"[18]

अनामिका की कविता में स्त्री विविध रूपों में आती है। कभी स्थानीय स्त्री के रूप में, कभी गृहस्थिन के रूप में, कभी प्रेमिका के रूप में। इन रूपों के अतिरिक्त मातृत्व की गन्ध के रूप में अनामिका के काव्य को देखते ही बनता है।

"माँ के नाखूनों से आती थी

बेसन की हल्की सी खुशबू

आँखों से

'मानस' की जर्जर प्रति से उठती

हल्की-सी खनिज गन्ध

गर्दन के पीछे से मकोय के फूलों की महक

बेकरी से अभी-अभी बाहर आयी

गरम पावरोटी की भाप

और उसकी नरम-नरम छाती से

जनमतुआ बच्चों के बालों का

मीठा-सा ताप।"[19]

अन्तिम स्राव-

प्रथम स्राव, माँ बनना और उसके बाद रजोनिवृत्ति भी एक शारीरिक प्रक्रिया है। स्त्री की उर्वरा शक्ति का ह्रास रजोनिवृत्ति के साथ होता है। जब स्राव खत्म या कम हो जाता है जो कुछ शारीरिक बदलाव व विशिष्ट मानसिक परिवर्तनों का कारण बनता है। रजोनिवृत्ति के बाद स्त्री जीवन के नये जीवन, नये अध्याय की शुरूआत होती है। अनामिका ने इस सन्दर्भ में लिखा है-

''अन्तिम रजस्राव, छुटकारा, परिवर्तन ऋतु का

बस और क्या !

यात्रा शुरू होती है अनन्त की

'डेट' और 'गेट' से निकलकर ही।''[20]

ढलती उम्र के इस पड़ाव पर ही शायद स्त्री को अपने वजूद की पहचान से साक्षात्कार करने का अवसर मिलता है। जीवन की हर सच्चाई को वह नजदीक से समझ पाती है। तभी तो अनामिका ने इन क्षणों को कलमबद्ध करते हुए लिखा है-

''चौथाई खर्चे में कर लेगी

एक ट्रंककाल

अपने वजूद को।

उससे तो बातचीत

कितने दिनों की

पड़ी है अधूरी।''[21]

रचनाकार की रचनाधर्मिता और हर कृति से उठती संवेदना कुछ ऐसे अनुभव संसार को रूपायित करते है जिसमें रचना, रचनाकार, रचना संसार एवं भावुकता एक साथ अपने पृथक अस्तित्व को त्याग देते हैं। कुछ ऐसी स्थिति अनामिका के काव्य

में उपस्थित है भारतीय इतिहास में स्त्री की स्थिति अच्छी नहीं रही है। पुरुष प्रधान समाज में स्त्री को मात्र एक वस्तु के रूप में देखना पसन्द किया गया है। उसके अंग-प्रत्यंग का मूल्य किया जाता हैं, लेकिन उसके अन्दर जो सामर्थ्य है, उसका कोई मूल्य नहीं है। उसके व्यक्तिगत जीवन में कितना कोलाहल है यह समझने की आवश्यकता है। मंजु रुस्तगी के अनुसार- "स्त्री विमर्श के परिप्रेक्ष्य में कहें तो अनामिका की कविताएँ समय और समाज के जीवन की वास्तविकताओं तथा सम्भावनाओं को तलाश करने वाली स्त्री दृष्टि हैं। अनामिका अपनी कविताओं में पूरी तरह से शामिल है। उनकी शक्ति उनके लिखे शब्द ही है। ये महज शब्द नहीं है, बल्कि बीज है, उन तमाम आन्दोलनों के, जो हो चुके है या होने वाले है- स्त्री मुक्ति के लिए, स्त्री के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के लिए। कहना अनुचित न होगा कि अनामिका अपनी कविताएँ स्त्री स्वभाव के अनुसार बुनती है और सिलती हैं।"[22]

अनामिका ने अपने काव्य में स्त्री के व्यक्तिगत जीवन के जो रूप प्रस्तुत किये है। यह रूप केवल एक स्त्री ही प्रस्तुत कर सकती है। क्यों कि जो भोगा हुआ होता है। उसका वर्णन बड़ी मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया जा सकता हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 अनामिका का काव्य, मंजु रुस्तगी, वाणी प्रकाशन, सं. 2015, पृ. 197
2 कृपा कुलकर्णी, मराठी व्युत्पत्ति कोष पृ. 804
3 कमल कुमार मुक्ता, स्त्री सशब्द विवेक और विभ्रम, पृ. 64
4 अनामिका का काव्य, मंजु रुस्तगी, वाणी प्रकाशन, सं. 2015, पृ. 198
5 जर्मन ग्रीयर, विद्रोही स्त्री, पृ. 50
6 मंजु रुस्तगी, अनामिका का काव्य, पृ. 81
7 अनामिका, प्रथमस्राव, अनुष्टुप, पृ. 28
8 जर्मन ग्रीयर, विद्रोही स्त्री, पृ. 55
9 अनामिका, प्रथमस्राव, अनुष्टुप, पृ. 28-29
10 अनामिका, मरने की फुर्सत, दूब धान, पृ. 28
11 अनामिका, तीसरी दुनिया: एक स्त्री का अन्तर्जगत बनाम बहिर्जगत कविता में औरत, पृ. 50
12 सिमॉन द बोउवा, स्त्री उपेक्षिता, पृ. 151
13 अनामिका, अन्त:सत्वा, बीजाक्षर, पृ. 30
14 अनामिका, अन्त:सत्वा, बीजाक्षर, पृ. 30
15 अनामिका, अन्त:सत्वा, बीजाक्षर, पृ. 30
16 सिमॉन द बोउवा, स्त्री उपेक्षिता, पृ. 34
17 अनामिका, अन्त:सत्वा, बीजाक्षर, पृ. 30
18 अनामिका, ईश्वर, बीजाक्षर, पृ. 68
19 अनामिका, गन्ध, बीजाक्षर, पृ. 59
20 अनामिका, एक्सपायर्ड मेडिसिन, अनुष्टुप, पृ. 22
21 अनामिका,पचास, अनुष्टुप, पृ. 59
22 मंजु रुस्तगी, अनामिका का काव्य, पृ. 86